बचाव

दिव्या माथुर

बचाव

निंदिया के बाबा कहा करते थे कि दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं; एक तो वे जो पक्षियों की तरह सूरज के उगते ही उठ जाते हैं और दूसरे वे जो उल्लुओं की तरह दिन

में भी सोते रहते हैं; उल्लुओं से कोई क्या अपेक्षा रख सकता है? बाबा के ताउम्र डाँटने-डपटने के बावजूद निंदिया कभी समय पर नहीं उठ पाई। हर रात सोने से पहले वह अपने से वादा अवश्य करती है कि कल से वह जल्दी उठेगी किंतु हर सुबह 'बस पाँच मिनट और' करते देर हो ही जाती है। आज सुबह भी उसकी आँख लगी ही थी कि अलार्म बजने लगा; उसे रोकने की चेष्टा में वह सोफे से लुढ़क कर नीचे आ गिरी। मकान मालकिन, धीरू बेन, कहीं हल्ला न मचा दें! रजाई, कंबल और तकिए से जूझते हुए, हाथ में आकर भी घड़ी फिसलकर न जाने कहाँ गायब हो गई। किसी तरह अलार्म बंद हुआ और वह आँखें मलती, गिरती, पड़ती और अपने को कोसती हुई वह स्नानघर की ओर लपकी। मुँह में टुथब्रश ठूँसकर उसने नहाने के लिए गर्म पानी की टोंटी घुमाई ही थी कि एक नन्हा तिलचट्टा नाली से निकला और नहाने के टब में इधर से उधर दौड़ने लगा। भयभीत निंदिया ने जल्दी से फव्वारे की तेज धार से उसे वापिस नाली में धकेल दिया। शायद तेज गर्म पानी ने उसकी जान ले ली हो या फिर वह नाली में बहता-बहता कहीं दूर निकल गया हो। निंदिया ने सुन रखा था कि कीड़े-मकोड़े बहुत सख्त-जान होते हैं; तिलचट्टे तो माइक्रोवेव के ताप से भी बच निकलते हैं।

दिन भर दफ्तर में निंदिया रह-रह कर यही सोचती रही कि उसे क्या आवश्यक्ता थी बेचारे तिलचट्टे पर तेज गर्म पानी डालने की? हालाँकि उसने जानबूझ कर ऐसा नहीं किया था; वह सदा गर्म पानी का नल ही पहले खोलती है क्योंकि यदि ठंडे पानी का नल पहले खोला जाए तो पानी के तापमान को संतुलित करने में अधिक समय लगता है। खैर, तिलचट्टे को ही क्या आवश्यकता थी सुबह-सुबह निंदिया के टब में प्रकट होने की? सारा दिन वह दफ्तर में होती है, तब चाहे जहाँ घूमता। निंदिया ने सोचा कि यदि तिलचट्टा किसी ब्रिटिश कोर्ट में मुकदमा दायर कर सकता तो निंदिया को अवश्य जेल हो जाती जैसा कि उसने हाल ही में समाचार-पत्रों में पढ़ा था कि घर में घुस आए चोर को जब एक अंग्रेज ने गोली चला कर घायल कर दिया तो चोर ने उस पर मुकदमा दायर कर दिया और जज का फैसला था कि उसे चोर पर गोली नहीं चलानी चाहिए थी; पिस्तौल दिखा कर धमकाने भर से काम चलाया जा सकता था।

निंदिया ने बहुत सी बौलिवुड फिल्मों में देखा था कि नायिका अपने थरथर काँपते हुए हाथों में पिस्तौल को थामे खलनायक से कहती है, 'पीछे हट जाओ नहीं तो मैं गोली चला दूंगी,' और इसी बीच अपराधी उसके हाथ से पिस्तौल छीन लेता है और हो जाता है नायिका का राम नाम सत्य। निंदिया को ऐसे दृश्य देख कर इतनी कोफ्त होती है कि पूछो नहीं। अंग्रेज के पक्ष में बहुत से लोग थे जो कह रहे थे कि मौत जब सिर पर खड़ी हो तो कोई क्या यह सोचेगा कि अपराधी को कितनी मात्रा में घायल किया जाए?

इसके बावजूद, बेचारे अंग्रेज गृहस्वामी को जेल जाना पड़ा; और घायल चोर के चित्र अखबारों में छपते रहे; यह इंग्लैंड है।

हाँ, यह इंग्लैंड है; निंदिया यहीं बसने के लिए दो सालों से हाथ पाँव मार रही है। उसके पासपोर्ट पर होम-ऑफिस वालों ने ठप्पा लगा दिया है कि वह केवल अंतरराष्ट्रीय कार्यालयों अथवा दूतावासों में ही काम कर सकती है। इस प्रतिबंध के रहते उसे कोई अच्छी नौकरी तो नहीं मिल पाई किंतु पिछले दो वर्षों के भीतर ही वह इन कार्यालयों के सारे रहस्य अवश्य जान गई। अल्प वेतन के एवज में निंदिया जैसे लोगों को ये कार्यालय नौकरी तो अवश्य दे देते हैं किंतु अपेक्षित सुविधाएँ नहीं देते और न ही समय पर उनका वेतन बढ़ाते हैं, पैंशन की तो बात ही छोड़िए। ब्रिटिश सरकार के आधीन न होने के कारण इन पर मुकदमा भी नहीं चलाया जा सकता। जहाँ एक तरफ नौकरी से निकाल दिए जाने के भय से कर्मचारी चुप रहते हैं, वहीं दूसरी तरफ अधिकारीगण उनकी इस मजबूरी का नाजायज फायदा उठाते हैं। निंदिया जैसे कई हताश प्रत्याशी कीड़ों की तरह नाली में रोज बहा दिए जाते हैं और अपने बचाव के लिए वे आवाज नहीं उठा सकते।

ढेर आ पैसा बना कर लौटने का सपना तो निंदिया को भी सच होता नजर नहीं आ रहा और लौटी तो वहाँ कौन सी नौकरी मिल जाएगी? रिश्तेदारों के कटाक्ष अलग सुनने को मिलेंगे। कम से कम यहाँ की आबो-हवा अच्छी है और घूमने फिरने की आजादी है; उसे कोई जबरदस्ती शादी के लिए तो दिक नहीं कर रहा?

निंदिया की सहेली मेनका एक दूतावास में काम करती है; जहाँ कार्यरत कई कर्मचारी बीस-तीस साल से उसी दूतावास में टिके हैं। दस-पंद्रह पाउंडस सालाना वृद्धि के अतिरिक्त उन्हें कोई अन्य सुविधा नहीं मिलती। वेतन टैक्स-फ्री होने की वजह से महीने का खर्चा बस पूरा हो जाता है। सरकार को तो कानूनी तौर पर उन्हें अच्छे खासे पढ़े-लिखे योग्य लोग एक बार यदि इस जाल में फँस गये तो समझिए कि बारह वर्ष के लिए तो गए काम से; हाँ इतने ही बरस लगते हैं पासपोर्ट से ठप्पा हटवाने में। ठप्पा हट जाने के बाद वे किसी योग्य नहीं रह जाते; परिस्थितियों से लड़ते-लड़ते उनकी हिम्मत जवाब दे जाती है, आत्मविश्वास कम हो जाता है और एक ही ढर्रे पर चलते की उन्हें आदत हो जाती है। नहीं, नहीं, निंदिया अपने साथ ऐसा कदापि नहीं होने देगी। उसे जल्दी ही अपने पाँव पर खड़ा होना होगा। बात-बात में जो माँ कहतीं रहती थीं, 'बेटा होता तो बात और थी,' उसे उन्हें गलत सिद्ध करना होगा।

एक ऐसी ही अंतरराष्ट्रीय कंपनी में लिपिक की एक स्थायी नौकरी के लिए निंदिया ने आवेदनपत्र दिया था। सबसे अच्छा टैस्ट करने के बावजूद, एक राजदूत की बेटी, सुकृति सुब्रामन्यम, का चयन कर लिया गया था। दोस्ती का हाथ बढ़ाते हुए प्रशासनिक अधिकारी, कमल कोडनानी ने कंधे उचका कर अपनी मजबूरी जाहिर कर दी थी। निंदिया ने सोचा कि चलो कुछ और न सही तो इस दौरान हुई कोडनानी से उसकी मित्रता काम आएगी। इन दफ्तरों में बिना जान-पहचान के कुछ नहीं होता और हुआ भी वही। चाहे तीन महीनों के लिए ही सही निंदिया को जल्दी ही उसने अस्थायी लिपिक के तौर पर भर्ती करवा लिया फिलोमिना डीसूजा की जगह, जो मैटरनिटी-लीव पर जा रही थी। जब फिलोमिना की छुट्टी समाप्त होने को आई तो कोडनानी ने उसे छुट्टी बढ़ाने की सलाह दी, जिसे वह झट मान गई; ओपेयर्स यहाँ इतनी महँगी हैं कि बच्चे को किसी के पास छोड़ने की तो वह सोच भी नहीं सकती थी और इस तरह निंदिया को तीन महीनों की मोहलत और मिल गई। इसी बीच आपूर्ति-विभाग से कोई लंबी छुट्टी पर गया तो निंदिया का स्थानांतरण वहाँ कर दिया गया; एक साल पूरा होते-होते वह दफ्तर के सभी विभागों में घूम चुकी थी। हर महीने उसे तीन सौ पाउंड मिलते थे; जिसमें से वह सौ पाउंड किराए के दे देती थी, सौ पाउंड खाने पीने और रेल-बस के भाड़े आदि पर का खर्च हो जाते थे। सप्ताह में तीन दिन वह आशुलिपि की कक्षा में जाती थी, जिसके लिए उसे पच्चीस पाउंड अलग से देने पड़ते थे। यदि उसे लिपिक की स्थायी नौकरी मिल जाए तो उसका पचास पाउंड्स बढ़ सकता था; एक साल में वह छै सौ पाऊंडस जमा करके माँ-बाबा को भेजकर चकित कर देना चाहती थी; एक साल में पैंतीस हजार रुपये तो बाबा ने भी कभी नहीं कमाए होंगे।

शाम को जब घर लौटी तो मेज पर निंदिया को अपनी अंतरंग और धनी सहेली रूपा शाह का पत्र रखा मिला। रूपा से जुड़ा था निंदिया का अतीत; शायद इस बार माँ ने कुछ लिखवाया हो। लाड़-प्यार से पाली बेटी एकाएक उनकी जान पर बन आई थी। रुई के फाहे में रख कर पाला था माँ ने उसे; सड़ी गर्मी में भी वह उसे गुनगुने पानी से नहलातीं थीं कि उनकी निन्नु को कहीं ठंड न लग जाए। पति से अनुनय-विनय कर उन्होंने उसका दाखिला लेडी अर्विन स्कूल में करवाया था; बाबा कितना भुनभुनाए थे कि प्राइवेट स्कूल में पढ़ा कर क्या बेटी से नौकरी करवानी है पर माँ ने जब उनसे कहा कि आजकल अच्छे स्कूलों में पढ़ी-लिखी लड़कियों को ही अच्छे घर-वर मिलते हैं तो वह मान गए थे।

निंदिया ने बाबा को कभी मुस्कराते नहीं देखा था; उनका एक ढर्रा बँधा था, जिससे वह एक इंच भी इधर से उधर नहीं होते थे। माँ स्वयं पूजा-पाठ नहीं करती थीं किंतु दौड़-दौड़ कर बाबा के लिए पूजा की तैयारी बड़ी मुस्तैदी से करती थीं। सुबह आठ बजे खाना खाकर घर से निकले बाबा रात के नौ बजे लौटते थे; थके और क्लांत। नियमित ओवरटाइम करके बेटी के दहेज के लिए धन इकट्ठा करना उनके जीवन का उद्देश्य था। किंतु निंदिया की ख्वाहिशों का तो कोई ठिकाना ही न था, जिनसे उसका परिचय करवाया था रूपा ने; उसे कारों में घुमाकर, फिल्में दिखाकर और पौश होटलों में भोजन खिलाकर। घर वापिस लौटती तो उसे लगता कि वह वापिस एक झोपड़ी में लौट आई हो, जहाँ वह केवल सपने भर देख सकती थी। हैरानी तो उसे इस बात की थी कि रूपा भी सपने देखती थी; भला उसे क्या कमी थी? 'कमी' भी एक अजीब चीज है, बड़े रईसों की कमियाँ भी बड़ी होती हैं।

माँ-बाबा दोनों की आशाओं पर पानी फिर गया था; उनकी सुंदर और पढ़ी-लिखी कन्या के लिए भी कोई चार-पाँच लाख से कम पर राजी नहीं हो रहा था।

'जो पैसा तुमने इसके प्राइवेट स्कूल पर खर्च किया, वह दहेज के काम आ सकता था,' बाबा शिकायत करते रहते।

'मेरे गहने कब काम आएँगे? इन्हें बस साफ करवाना पड़ेगा।'

'गहनों और दहेज के अलावा लड़के वाले शादी भी अच्छी चाहते हैं।' माँ-बाबा दिन रात बस यही हिसाब लगाते रहते।

राम राम करके मथुरा के एक अग्रवाल परिवार से रिश्ता आया था। हर सप्ताहांत पर भैंस की सी श्रीमती अग्रवाल अपने केंचुए से गिलगिले बेटे, पल्लव को लेकर उनके यहाँ आ टिकतीं; लिसलिसे प्रश्न पूछ-पूछ कर निंदिया को हैरान और परेशान करतीं, 'माहवारी कब हुई थी?' 'समय पर होती है कि नहीं?' 'कॉलेज में कोई ब्वायफ्रेंड तो नहीं बना रखा?' इत्यादि। अगली बार जब निंदिया को माहवारी हुई तो श्रीमती अग्रवाल घर में मौजूद थीं। यह देखने के लिए कि कहीं वह झूठ तो नहीं कह रही थी। उनका बस चलता तो वह पाखाने में घुसकर निंदिया का निरीक्षण भी कर लेतीं।

इस सबके बावजूद, निंदिया का विवाह पल्लव अग्रवाल से तय कर दिया गया, जिसे माता जी स्नेह से लल्लन कहकर पुकारती थीं। लोलुप लल्लन के लार-लिपे होंठ देखकर निंदिया को उल्टी आने लगती। श्रीमती अग्रवाल को बहू के रूप में निंदिया इतनी पसंद आई कि अपने पाँच लाख के लल्लन को वह सिर्फ दो लाख में बेचने को

मान गईं। माँ और बाबा उनकी इस मेहरबानी पर कुर्बान हो गए; पौने दामों में उन्हें ये सौदा बुरा नहीं लगा। बेटी से पूछने की भला उन्हें क्या आवश्यक्ता थी? बाबा ने झट से एक सौ एक रुपये थमा कर पल्लव को रोक लिया। बाबा की बीमारी और लाचारी की दुहाई देते हुए माँ ने निंदिया को कमरे में धकेल दिया। नायलन की एक साड़ी और कुछ मुसे हुए रुपये गोद में डालते हुए श्रीमती अग्रवाल ने लल्लन को निंदिया के साथ बैठा दिया कि अब वे चाहें तो अकेले में बात कर सकते थे। जैसे ही सब लोग बाहर निकले, पसीने से लथपथ लल्लन का हाथ निंदिया के हाथ पर आ टिका; मानो उसे किसी बिच्छू ने डस लिया हो। अपना हाथ पोंछती हुई वह भागी अपने कमरे की ओर; श्रीमती अग्रवाल हो हो कर हँसने लगीं। उन्हें और लल्लन को निंदिया की यह अदा बहुत भायी।

अगले ही दिन निंदिया कालेज से लौटी तो देखा बड़ी-बुआ माँ के पास बैठीं थीं।

'निन्नु, देख तो सही बीबी जी तेरे लिए कितनी सुंदर साड़ियाँ लेकर आईं हैं,' एक नजर में निंदिया ताड़ गई कि साड़ियाँ बुआ के अपने विवाह की रही होंगी। बाबा से पैसे लेकर वह उन्हें अपनी कुछ पुरानी साड़ियाँ भेड़ रही थीं। बुआ के जाते ही निंदिया खूब बरसी पर इस बरसात से माँ जरा न भीगीं। साड़ियाँ सहेज कर उन्होंने बड़े ट्रंक में रख दीं, जिसमें उन्होंने पहले से ही कुछ नए-पुराने कपड़े जमा कर रखे थे; जिनमें से सीलन के भभके उठते थे।

स्कूल में निंदिया अपनी कक्षा में सदा प्रथम आती थी; उसने कभी किसी को शिकायत का मौका नहीं दिया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्यों एकाएक वह माँ बाबा पर भारी पड़ने लगी? रूपा के मम्मी-पापा तो कभी उसके विवाह की बात तक नहीं करते। कम से कम उसे कॉलेज तो खत्म कर लेने दें। निंदिया के विद्रोह को माँ ने बाबा तक पहुँचने ही नहीं दिया; उन्हें तो लग रहा था कि निन्नु के विवाह की उम्र निकली जा रही थी। यदि इस बरस उसका लगन न हुआ तो बिरादरी के लोग बातें बनाने लगेंगे कि बेटी में कोई खोट होगा, तभी तो अब तक घर में बैठी है। पिंजरा खुला था किंतु पंख फड़फड़ाने के सिवा निंदिया कुछ नहीं कर पा रही थी।

बिंदास रूपा ने निंदिया को न केवल घर से भाग जाने की सलाह दी, उसकी खटाखट तैयारी भी शुरू कर दी। चचेरे और ममेरे भाइयों की लाड़ली रूपा को धन की कोई कमी न थी; कार और ड्राइवर सदा उसके साथ रहते थे। उसे यदि कोई कमी थी तो वह थी माँ-पिता के लाड़-प्यार की, जिनके पास बेटी को देने के लिए सब कुछ था सिवा समय के। निंदिया को लगता कि भला रूपा को क्या कमी हो सकती है और रूपा को लगता

कि वह अपना सब कुछ न्योछावर कर सकती थी निंदिया के माँ-बाबा के सहज वात्सल्य के लिए।

माँ को निंदिया का रूपा से अधिक मेल-जोल पसंद न था; उनकी नजरो में रूपा एक अच्छी लड़की नहीं थी। निंदिया स्वयं भी यही सोचती थी कि रूपा कुछ अधिक ही धृष्ट थी किंतु उचित और अनुचित का अनुपात शायद व्यक्तिगत होता है। जो माँ को अनुचित लगता है, निंदिया को उचित लगता है और जो इन दोनों की नजर में अनुचित है, रूपा के लिए प्राकृतिक। रूपा का बात बात में गाली देकर बात करना, लड़कों के साथ खुले आम घूमना-फिरना, शाम को देर से घर लौटना और अपने मम्मी पापा से जुबान लड़ाना आदि निंदिया को अनुचित लगता था किंतु मन ही मन वह चाहती कि काश वह भी रूपा जैसी निडर, चतुर और चुस्त होती।

निंदिया को लग रहा था कि रूपा को अपनी निजी बातें बता कर कहीं उसने गलती तो नहीं कर दी किंतु और कौन था जिसे वह अपनी व्यथा सुनाती या जो उसकी मदद कर सकता?

रूपा की एक अविवाहित मौसी, धीरू बेन पटेल, साउथहॉल के एक महिला संगठन की अध्यक्ष थीं। रूपा की जुबानी निंदिया की कहानी सुनकर वह उसे अपने पास लंदन बुलाने को तैयार भी हो गईं। जैसे तैसे माँ-बाबा से चोरी छिपे उसका पासपोर्ट बना, एरोफ्लोट से सफर का एक सस्ता टिकेट खरीदा गया और थोड़े बहुत सामान के साथ, जिसे वह चोरी छिपे रूपा के यहाँ इकट्ठा करती रही थी, निंदिया निकल पड़ी। सोचा था कि शायद माँ को दी गई उसके घर से भाग जाने की धमकी काम आ जाएगी किंतु उन्होंने तो बाबा को इस बारे में कुछ बताया तक नहीं; उनमें इतनी हिम्मत कहाँ थी कि वह चूँ भी करतीं और निंदिया भी तो रूपा के बल पर ही कूद रही थी। कई बार भयभीत होकर उसने अपनी यात्रा स्थगित करने की भी सोची किंतु रूपा के डर के मारे चुप रही। इसी बीच उसका वीजा भी बन चुका था; इतना पैसा लग चुका था कि अब चाहे भी तो निंदिया पीछे नहीं हट सकती थी। उसने अपने मन के समझा लिया था कि जब बाबा मान जाएँगे तो वह झट वापिस आ जाएगी और 'सॉरी' कहते ही सब ठीक हो जाएगा। उधर माँ ने सोचा था कि उनकी लाड़ली निन्नु झक मार कर अंत में करेगी वही जो बाबा कहेंगे।

इंदिरा गांधी हवाई अड्डे पर रूपा और उसका ममेरा भाई, दिनेश, उसे छोड़ने आए थे। निंदिया मुड़-मुड़ कर देख रही थी कि कहीं बाबा उसे जबरदस्ती वापिस ले जाने न आ पहुँचे हों। मन ही मन शायद वह यह चाह भी रही थी कि किसी तरह जाने से उसे रोक

लिया जाए किंतु कोई नहीं आया। उसकी दशा कैंसर के उस मरीज की सी थी जो अब और अधिक पीड़ा नहीं सह सकता पर मरना भी नहीं चाहता।

हवाई-जहाज के उड़ते ही दिनेश ने माँ-बाबा को फोन पर खबर कर दी उन लोगों की जोर-जबरदस्ती से तंग आकर निंदिया भारत छोड़ कर विदेश चली गई थी। बाबा चिल्लाते रह गए और फोन रख दिया गया। वे जानते थे कि इस साजिश के पीछे केवल रूपा का ही हाथ हो सकता था किंतु पुलिस में शिकायत करके भी उन्हें क्या हासिल होता? हाँ, कुछ दिनों के लिए बाबा ने रूपा और उसके घर-वालों का जीना अवश्य हराम कर दिया। उसके माँ-बाप को गालियाँ दीं, जिन्हें इस बारे में कुछ मालूम तक न था। बड़े लोगों की बड़ी बातें, बड़ी व्यस्तताएँ, वे भी कब तक सुनते? उन्होंने पुलिस को बुलवाकर बाबा को घर से बाहर निकलवा दिया। रूपा ने निंदिया का पता फिर भी उन्हें नहीं बताया। हाँ, उसकी माँ को चुपचाप जाकर बता अवश्य आई कि निंदिया उसकी मौसी के पास सकुशल थी।

लंदन पहुँच कर निंदिया ने कई बार वापिस लौटने की सोची पर माँ ने कभी लिखा ही नहीं कि वह वापिस आ जाए। शायद बाबा ने उसे आज भी माफ नहीं किया है। अब वह उन्हें दोष नहीं देती बल्कि जब-जब वह उनकी बेबसी के बारे में सोचती है, उसका दिल कुछ ऐसे सिकुड़ जाता है कि जैसे कोई गीले कपड़े को निचोड़ रहा हो। उसी की वजह से क्या-क्या नहीं भुगता होगा माँ-बाबा ने? जवान बेटी के प्रति पड़ोसियों और संबंधियों के कटाक्ष उन्हें आज भी सुनने पड़ रहे होंगे। हर रात सहगल की आवाज में बाबा गुनगुनाया करते थे, 'सो जा राजकुमारी, सोजा,' तो बेटी की ओर देखते हुए माँ आँखों ही आँखों में मुस्करा कर कहतीं थीं, 'लो यह फिर शुरू हो गए।' रोजमर्रा की उनकी नोंक-झोंक सुनने की आदी निंदिया को अब विदेश की खामोश रातें काटने को दौड़तीं हैं।

निंदिया को जब भी माँ-बाबा की याद सताती है, वह अपनी आँखें भींचकर सोफे के बीच की दरार में घुसने का प्रयत्न करती है; कभी माँ को लंबा सा एक पत्र लिखती है जिसमें लंदन की सारी सुविधाओं का वर्णन होता किंतु उन तकलीफों का नहीं जो वह हर रोज भुगतती है। कब से उसने माँ के हाथ की असली घी में चिपड़ी गर्म रोटी नहीं खाई, 'एक और,' 'एक और,' कह कर माँ कैसे उसे गस्से खिलातीं थीं, घुटनों में दबाकर हर इतवार को उसके बालों में जबरदस्ती नारियल का तेल मलतीं थीं, बाबा से छिपा कर उसे रुपये देतीं थीं कि रूपा के आगे कहीं उसकी हेठी न हो जाए; स्मृतियों की दुलत्तियाँ निंदिया के लिए कहीं अधिक कष्टदायी थीं।

अब तो रोज वही गुजराती भोजन, सुबह शाम टेप पर चलते साईं बाबा के भजन और उसका बक्सानुमा कमरा; जिसमें घर जैसा कुछ नहीं। धीरू बेन को वह 'मासी' कहकर बुलाती है हालाँकि 'माँ सी' तो वह बिल्कुल नहीं हैं। जब भी उसे देखतीं हैं, बस टोकती हैं, 'बत्ती जल्दी बंद करया कर, ढीकरी,' या 'इलैक्ट्रिक केटली मोंगी छे,' या 'गर्मी माँ पण गरम पाणिया स्नान करे छे, छोकरी,' या 'सनिवारे साड़ी नी दुकान माँ केम न थी करती दिनिया तु' इत्यादि। वह उसे अधिकतर 'दिनिया' कहकर बुलातीं हैं और निंदिया उन्हें कभी नहीं टोकती; उसकी अवस्था के मुताबिक 'दिनिया' नाम बड़ा सटीक लगता है, बिल्कुल उसकी तरह दीन हीन।

निंदिया पर रूपा के सैंकड़ों रुपये बकाया हैं; ऐसा नहीं कि उसने कभी माँग की हो किंतु एक न एक दिन तो लौटाने हैं ही। अच्छा सा एक पर्दा तक तो वह खरीद नहीं पाई है अब तब। एक चीकट प्लास्टिक का पर्दा उसके कमरे की खिड़की पर टँगा है, जो इतना लंबा है कि उसके बिस्तर तक आ जाता है। उसे काट के छोटा करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता; मासी कहतीं हैं कि कभी उन्हें घर बदलना पड़ा और नए घर की खिड़की यदि थोड़ी सी बड़ी हुई तो यह पर्दा बेकार हो जाएगा।

पानी में तेल सी तैरती रहती हैं धीरू बेन साउथहॉल में। हालाँकि यहाँ भी उनके ढेर से मित्र हैं पर अब उन्हें लगता है कि अपने देश यानि कि वैंबली वापिस चला जाए जहाँ उनकी गुजराती सहेलियाँ और रिश्तेदार रहते हैं, जहाँ कि आबोहवा में ढोकले, खांडवी और चीवड़े की खुश्बू आती है। चिकन और मटन खाने वाले पंजाबियों से ऊब चुकी हैं वह अब। सत्तर के दशक में सुना है कि वह एक साउथहॉल-निवासी पंजाबी युवक के प्यार के चक्कर में पड़ गई थीं। पहले पहल तो दलवीर ने उन्हें बताया ही नहीं कि वह विवाहित था और जब पोल खुली तो सालों इसी आशा में निकल गए कि वह पत्नी को तलाक देकर उनसे विवाह कर लेगा। एक के बाद एक जब दलवीर के अपनी पत्नी से चार बच्चे हो गए तो एक दिन धीरू बेन को यकायक होश आया कि वह उन्हें बेवकूफ बना रहा था। अधिक पढ़ी-लिखी तो थीं नहीं; उन्हें सब्जी और फलों की एक बड़ी दुकान पर आसानी से काम मिल गया और वह रोज लगातार अट्ठारह उन्नीस घंटे काम करने लगीं। उनके लिए गम भुलाने का यह सबसे आसान तरीका था। मेहनत और ईमानदारी के बल पर उन्हें जल्दी ही मैनेजर बना दिया गया; पाँच साल के भीतर ही उन्होंने अपनी जैसी कई अन्य औरतों के साथ मिल कर 'सहारा महिला संगठन' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य था सताई गई अथवा दूसरे देशों से धोखे से लाई गई औरतों की सहायता करना। निंदिया ने एक बार धीरू बेन से पूछा था कि साउथहाल में बसी भारतीय महिलाओं के साथ भी अत्याचार होते हैं? उन्होंने जवाब दिया था कि

भारतीय महिलाए जहाँ भी जाएँ, रहेंगी तो भारतीय ही न? उन्हें बचपन से घुट्टी पिलाई जाती है चुपचाप सहते रहने की। विदेश में तो बेचारी और भी अकेली पड़ जाती हैं क्योंकि यहाँ उनकी कहीं सुनवाई नहीं होती। ससुराल वाले उन्हें एक नौकरानी से अधिक नहीं समझते; इनके पति स्थानीय औरतों के साथ मजे करते हैं और ये बेचारी घर और दुकान को सँभालती गालियाँ और घूँसो का शिकार बनती हैं। बच्चों को छोड़ कर जाते भी नहीं बनता और लौटें भी तो वहाँ कौन बैठा है जो इनकी व्यथा सुनेगा?

दिन और रात निंदिया उन्हें बस भागते दौड़ते ही देखती है और धीरू बेन चाहती हैं कि निंदिया भी उतनी ही मेहनत करे। हालाँकि निंदिया कोई कम मेहनत नहीं कर रही किंतु धीरू बेन को लगता है कि सप्ताहांत के दौरान सब्जी-फल या साड़ियों की दुकान पर काम करके वह काफी पैसा कमा सकती है। उन्हें ये समझ नहीं आता कि निंदिया के आड़ी-तिरछी लाइनें खींचने से क्या होगा?

घर छोड़ते वक्त निंदिया बाबा का एक औडियो-कैसेट उठा लाई थी; सुबह-सुबह वह पंडित जसरास के भजन सुनते थे और उनके दफ्तर जाने के बाद माँ सहगल और पंकज मलिक आदि को सुना करतीं थीं। उन दिनों रोज रोज वही गीत और भजन सुन कर निंदिया झल्लाया करती थी किंतु आज उसे सनक उठ रही है उन्हीं गीतों को सुनने की; पर पैसे हैं कि बचते ही नहीं। वह बरबस गुनगुना उठी, 'मुझको है तुमसे प्यार क्यूँ, ये न बता सकूँगा मैं,' धीरू बेन जब भी उसे गाते सुन लेतीं तो टोक देतीं, 'ढीकरी, प्यार-ब्यार माँ कईं राखियो न थी, सांईं बाबा न भज्जन सोबड़ तो तारु काम थई जासे।'

अक्तूबर के शुरू में ही काफी ठंड पड़ने लगी; सड़कों और स्टेशनों पर भिखमंगों को गर्म कोट, मफलर और दस्ताने पहने देखती तो निंदिया अपने को और भी दयनीय स्थिति में पाती। सुना है कि यहाँ के लोग बहुत दयावान हैं और अपने नए-नए कपड़े भी गरीबों को दान में दे देते हैं पर अपने आकार-प्रकार की एक परोपकारी महिला को ढूँढ़ना निंदिया के लिए असंभव है। लोग अपने पुराने फ्रिज और टेलिविजन जैसी चीजे घरों के बाहर डाल देते हैं; निंदिया का अपना घर होता तो मुफ्त में भर जाता। भारत में तो अखबारों की रद्दी और बोतलें बेचकर माँ एक हफ्ते की सब्जी आदि खरीद लाती थीं; यहाँ तो सामान उठा ले जाने भर के लिए कबाड़ी वाले दस या बीस पाउंड माँगते हैं और इसीलिए लोग रात को चुपचाप अपना पुराना सामान घर के बाहर रख देते हैं ताकि जिसे चाहिए, ले जाए। ढेर से समाचारपत्र और पत्रिकाएँ मुफ्त में मिल जाती हैं जिन्हें वह चाट डालती है; कितने ही मजेदार लेख और चित्र होते हैं, जिन्हें वह सँभाल के रखना चाहती है किंतु सप्ताहांत की सफाई के दौरान बुड़बुड़ करती हुई मासी उन्हें

कूड़ेदान में फेंक देती हैं। आँखों में समा लेती है निंदिया सड़क किनारे फेंकी गई वे ढेर सारी वस्तुएँ, जो उसे पसंद आतीं हैं।

इसी बीच हाई-स्ट्रीट पर मटरगश्ती करते हुए निंदिया ने एक दुकान की खिड़की में एक कोट टँगा देखा; वह इतना सस्ता था कि उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। इससे पहले कि उसे कोई और ले लेता, उसने जल्दी से उसे खरीद लिया। हालाँकि बुआ की लाई पुरानी साड़ियों सा लगा था उसे वह कोट, जिसे देखते ही धीरू बेन बोल उठीं थीं, 'आक्सफैम माँ तो मरेला लोको नी वस्तुओ वेचाइ छे।' निंदिया के उत्साह पर उन्होंने घड़ों पानी डाल दिया था। न जाने वह किस मृतक का कोट खरीद लाई थी?

प्रतिकारस्वरूप, उसी शनिवार को निंदिया फिर आक्सफैम गई और अपने लिए जूते, दस्ताने, पर्स और मफलर भी खरीद लाई। हालाँकि अब जब भी वह कोट पहनती है तो सोचती है कि इस कोट के पहने मालिक को कहीं कोढ़ की बीमारी ही न हो और जूतों में कभी-कभी उसे अपने पाँव ही अपने नहीं लगते। सुषमा के टोकने के बावजूद, वह दफ्तर में नंगे पाँव घूमती रहती। किंतु आक्सफैम जाना उसने फिर भी नहीं छोड़ा; एक ही तो दुकान है जहाँ वह कुछ भी खरीद सकती है; दस-दस पैंस में किताबें मिल जाती हैं, जिन्हें वह देर रात तक पढ़ते हुए अपने सारे दुख दर्द भूल जाती है।

धीरू बेन से मिलकर निंदिया के मन में बसी ब्रिटेन की रंगीन छवि धूमिल हो गयी थी। कहाँ रूपा और उसका परिवार और कहाँ उसी परिवार की एक सदस्या, धीरू बेन, जिन्हें देखकर लगता था कि जैसे कोई उन्हें आक्सफैम से उठा कर वैंबली में छोड़ गया हो; कपड़े का पुराना थैला लटकाए और धोती की चुन्नटों को टखनों तक उठाए जब वह घर से निकलतीं तो निंदिया को बरबस हँसी आ जाती।

'दिनिया, दिनिया, घोड़ा वेची ने तमै केम सुओ छो, जरा जुओ तो खरा के सु धाए छै,' सुबह के चार भी नहीं बजे थे कि पतीला खुरचने जैसी मौसी की आवाज ने पुलिस के 'टी टूं टी टूं' करते साइरन्स को भी मात दे दी। खिड़की से झाँका तो सड़क पुलिस की वर्दियों से भरी थी; पड़ोस में छापा पड़ा था।

'हूँ केती होति न दिनिया के हैन्की-पैन्की छे, गर में इलीगल इमिग्रंट्स रैते हैं,' आठ लोगों को हथकड़ी लगाकर वैन में बैठा दिया गया था। सुबह जल्दी उठ जाने की आदी गुजराती कौम पुलिस के जाने के बाद भी कचर-कचर में लगी थी। दो-दो पाउंड्स प्रति घंटा काम करने वाले ये इलीगल इमिग्रंट्स पालियों में सोने को मजबूर हैं; रात में काम करने वाला बंदा यदि रात को बीमार पड़ जाए तो उसे लेटने के लिए सुबह का इंतजार करना पड़ता है। घटिया खाना, बदबूदार बिस्तर, आधी-अधूरी नींद और

सोलह से अठारह घंटे काम करके भी इन्हें चैन नहीं; न जाने कब पुलिस आ दबोचे और जेल में सालों के लिए डाल दे।

निंदिया दोबारा सोने की कोशिश कर ही रही थी कि कोडनानी का फोन आ गया; दफ्तर के बाद शाम को पब में मिलने के लिए कह रहा था। मन ही मन निंदिया ने उसे बहुत कोसा किंतु मना नहीं कर पाई कि कहीं विदेश में वह अपने एकमात्र सहारे को भी न खो बैठे। यहाँ उसे कौन जानता है जो बाबा को जाके बता देगा कि वह एक पराए मर्द के साथ पब में बैठी थी? एक दो गिलास शराब पीते ही कोडनानी टिप्सी हो जाता है और उसे राज की बातें बताने लगता है कि उसके सहयोगी स्थानीय महिला कर्मचारियों के विषय में कैसी गंदी गंदी बातें करते हैं, 'ओ मेरे निच्चे लेट गइ ते मैं की करदा?' अथवा 'ओ मेरे कमरे विच आके जद डोर ला लेंदी आ ते मैं वी आपड़ीं पैंट ला दिंदा हाँ।' मेनका बता रही थी कि अधिकतर अधिकारी यह सोचते हैं कि विदेशों में युवतियाँ किसी के साथ भी सोने को तैयार हो जाती हैं। मेनका स्वयं भुक्तभोगी है, अपने ही देश से आए एक अधिकारी रौनी के साथ वह प्रेम में कर बैठी थी। एक दिन जब एक अन्य अधिकारी ने रौनी का हवाला देते हुए उसे होटल में चलने को कहा तो मेनका की आँख खुली; रौनी उसे अपने सहअधिकारियों को परोसने का प्रयत्न कर रहा था।

कोडनानी से मित्रता के कारण ही वह स्वयं इन लांछनों से बची हुई है; हालाँकि उसने अन्य लोगों को अपने विषय में भी खुसर-पुसर करते सुना है किंतु वह सफाई से उन्हें नजरंदाज कर देती है; कुछ कहा तो वे बेकार में अफवाहें उड़ाएँगे। वह सबसे बड़े सम्मान और स्नेह से बात करती है; उसके विभाग के प्रधान, मुकुंद मिश्रा, भी निंदिया की बड़ी इज्जत करते हैं और यही वजह है कि उनकी विशेष सचिव, श्यामा मित्रा, को वह फूटी आँख नहीं सुहाती।

निंदिया ने अभी अपना पर्स दराज में रखा ही था कि राधा-कृष्ण की जोड़ी से मिश्रा साहब और श्यामा मित्रा ने मंद मंद मुस्काते हुए दफ्तर में प्रवेश किया; निंदिया ने चैन की साँस ली कि उसे एक मिनट की भी देर हो जाती तो सारा दिन श्यामा उसे टोकती। 'गुड मौर्निंग,' का समवेत स्वर गूँजा। कीड़ों को अनदेखा करती घनश्याम जोड़ी प्रधान के कमरे में प्रविष्ट हो गई; कीड़ों की उलाहने भरी नजरें गोल गोल घूमीं और वापिस अपने कंप्यूटरों पर जा टिकीं। फोन की घंटी सुनकर, मदन मोहन कूदकर खड़े हो गये, 'यैस सर, सर, यैस सर, सर,' वह काफी उत्तेजित दिखाई दे रहे थे; फोन को ट्रांसफर करने के बाद भी वह असहज से खड़े रहे। श्यामा तनी हुई कमरे से बाहर आई और सीधी कामर्स विभाग की ओर बढ़ गई।

'सर, देखा आपने? नो शेम एट ऑल। सर, आप क्यों नहीं बताते साहब को श्यामा की करतूतें? सुषमा सीरा मदन मोहन के पास जा खड़ी हुई,

'एक खराब अमरूद पूरी बोरी को सड़ा देता है, सर,' मुहावरों को तोड़ मरोड़ कर पेश करना लाज खट्टर की आदत है। उसे तो अपने डैस्क से उठने का कोई मौका मिलना चाहिए। साहब की गैरहाजरी में, श्यामा कामर्स विभाग के गगन रॉय के साथ रहने लगी थी यानि कि दो दो अधिकारियों को एक साथ बुद्धू बना रही थी। लाज के शब्दों में 'मियाँ बीबी राजी तो क्या करेगा पाजी?' श्यामा और गगन दोनों शादीशुदा हैं और इसी वजह से चर्चा का विषय बने रहते हैं।

दफ्तर के सहकर्मियों की चपर-चपर के बीच भी निंदिया यही सोच रही थी कि सुबह न जाने कितने कठिन परिश्रम के बाद वह तिलचट्टा निंदिया के टब तक पहुँचा था और निंदिया ने उसकी सारी तपस्या पर पानी फेर दिया किंतु यदि वह प्रतिबद्ध है तो फिर प्रयत्न करेगा; निंदिया की ही तरह जिसे कीड़े की मानिंद अधिकारी आगे बढ़ने का मौका नहीं देते। आशुलिपि में डिप्लोमा लेने के बाद निंदिया ने एकाउंटैंसी का कोर्स भी कर डाला किंतु रही वह कलर्क की क्लर्क ही। बाबुओं को क्या लेना देना किसी की पढ़ाई-लिखाई से और बड़े अधिकारियों तक भला क्लर्कों की कहाँ पहुँच? निंदिया जानना चाहती है कि क्या हर शख्स और हर शै की जगह मुकर्रर है? यदि जीवन इसी का नाम है तो क्या पाप क्या पुण्य? विदेश में अपना एक मुकाम बनाने के निंदिया के सारे प्रयत्नों पर जो लोग अड़चनें बिछाते रहते हैं, उनका क्या दोष? वे भी निंदिया की तरह बाध्य हैं; बेचारे वही कर रहे हैं जो भाग्य उनसे करवा रहा है। देवी सरस्वती कहलवातीं है लोगों से न जाने क्या क्या? अब निंदिया का दिल दुखे तो क्या, लाखों दिल टूटते हैं दुनिया में हर रोज; विशेषतः निंदिया जैसे आपात कर्मचारियों के, जिन्हें पैंशन तो एक तरफ, बीमारी की छुट्टी भी नहीं मिलती।

दफ्तर से शाम को वापिस घर पहुँची तो निंदिया सीधे स्नानघर में गई; टब साफ था। सोचा कि कहीं इस वक्त तिलचट्टा नाली की लिसलिसी दीवार के सहारे फिर न चढ़ रहा हो; घबरा के उसने शावर ऑन कर दिया ताकि उसके टब में पहुँचने से पहले ही वह नीचे कहीं दूर बह जाए। उसे लगा कि शायद तिलचट्टों को दिखाई नहीं देता; जितना आप उनसे दूर भागने का प्रयत्न करते हैं, वे उतना ही आपकी ओर दौड़ते आते हैं। क्या निंदिया के अधिकारी भी उससे डरते हैं? तभी तो वे उससे कभी घुलते मिलते नहीं। वह उन्हें कैसे समझाए कि जीवन में उसे कुछ करना है; उसे एक मौका तो दें। किंतु क्या निंदिया ने मौका दिया उस कीड़े को? कितने लोग है इस देश में जो कीड़े मकोड़ों और जानवरों को जान से अधिक चाहते हैं, उन्हें चाटते रहते हैं और स्वयं को

चटवाते रहते हैं। वह उनके यहाँ क्यों नहीं चला जाता? निंदिया ही वापिस दिल्ली क्यों नहीं चली जाती? उसने इस विषय पर सोचा और सोच सोच के जब वह थक गई तो उसने सोचा कि मानव होकर जब उसे अपने पर बस नहीं तो एक कीड़े से वह ऐसी अपेक्षा क्यों कर रही थी? निंदिया को तो लगता है कि अपनी अपेक्षाओं को अच्छे अथवा उपयुक्त आचरण का नाम देकर एक दूसरे से अपना काम निकालने का ही दूसरा नाम आचार संहिता है क्योंकि लोग अपनी सुविधाओं के अनुसार नियम बनाते हैं किंतु जब खुद पर पड़ती है तो वे नियम बदल देते हैं। यही सब होता है उसके जीवन में, उसके कार्यलय में। न जाने कितनी रात गए सोई थी निंदिया कि सुबह उठा नहीं गया; बिना नहाए और बिना कुछ खाए वह भागी स्टेशन की ओर। न जाने निंदिया को आज क्यों लग रहा है कि कुछ होने वाला है, दिल मानो सीने से निकल कर बाहर आ गिरेगा। वह अभी हाजिरी लगा ही रही थी कि मिश्रा साहब और श्यामा भड़भड़ाते हुए कमरे से बाहर आए। सुषमा और लाज को मदन मोहन के साथ खड़ा देख वह उबल ही पड़े।

'क्या पालटी हो रई है? कुछ काम-धाम नईंयै क्या?' सब कीड़े जा छिपे अपने-अपने कंप्यूटरों के पीछे।

'कल्ल बड़े साब आ रए हैं,' सब स्थानीय कर्मचारियों के कान खड़े हो गए किंतु उन्होंने सोचा कि उनकी बला से; बड़े साब उनसे कभी 'हेलो' तक तो करते नहीं। अपनी घोषणा का कुछ असर न होते देख, उन्होंने एक उबलती हुई नजर कमरे में बैठे कर्मचारियों पर डाली और बोले, 'सुना नईं क्या? कल्ल सुबे बड़े साब आ रए हैं, आज साम तक सब फाइलें अपडेट कल्लो। सुबे सब टाइम पे आ जाना। कहीं सोती न रै जाइयो तू निंदिया, मैं अबी बता रया हूँ तुजे।'

श्यामा को मुस्कुराता देख निंदिया जल भुन उठी; एक वही तो है जो सारा दिन खटती है दफ्तर में। समय पर आकर भी बाकी के लोग क्या तीर मारते हैं? शाम को अधिकतर लोग पंद्रह बीस मिनट पहले ही फूट लेते हैं, निंदिया रोज एक घंटा देर से दफ्तर छोड़ती है, उसका कुछ नहीं?

'मैं जल्दी आने को इसलिए कैरा हूँ कि निंदिया, कल तुजे ई एयरपोर्ट से बड़े साब को लिवा के लाना होगा,' वह स्नेहपूर्वक बोले।

'क्या बात कर रहे हैं सर आप भी,' भौंचक सी निंदिया उनके चेहरे को ताक रही थी कि शायद वह मजाक कर रहे हों।

'साब का पिलैन अचानक बन गया; कल्ल सुबे मुजे नारविच जाना है; दुपैर में सयामा का जूनीवरशिटी में प्रैजेनटेसन है।'

'पर सर, मैं...'

'इब डिराइवर को इकले तो नइं बेज सकते न? बड़े साब तीनेक बजे पौंच जाएँगे। मदन, चाय पानी का इंतजाम करवा लेना, जरा काजु-साजु मँगवा लेना।'

'पर सर मैं...'

'क्या मैं मैं लगा रखी है तैने निंदिया, सुसमा से कैता तो जै कूद रई ओती। गबराने की कौनइ बात नईं अै, सामा समजा देगी तुजे सब और जब तलक बड़े साब दफ्तर पौंचेंगे, सामा बापिस आ गइ होगी।'

'सर, हमें बड़े साब का फूलों से स्वागत करना चाहिए,' सुषमा ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवा ही ली।

'गुड आडिया, स्टेसन से आते हुए निंदिया तू ई एक गुलदस्ता खरीद लाइओ।' साहब ने सुषमा को फिर नजरंदाज कर दिया।

'निंदिया कहाँ उठाती फिरेगी, सर, सुबह मैं ही ले आऊँगी कार में,' सुषमा और निंदिया जैसी छोटी मछलियों को निगलना श्यामा को खूब आता है; चार पाउंड के फूल खरीद कर वह पच्चीस पाउंड का बिल मदन मोहन को थमा देगी।

'सयामा, तुम क्या-क्या करोगी? निंदिया को ई लाने दो; इसकी चौइस बी अच्छी है,'

श्यामा का चेहरा कुछ और श्याम हो गया और ऊषा सी गुलाबी हो उठी निंदिया। दोनों के बाहर जाते ही सब कीड़े-मकोड़े एक जगह इकट्ठे हो गए, घोषणा को शहद सा चाटने के लिए।

'मुझे एयरपोर्ट भेजने के पीछे इन दोनों की कोई चाल तो नहीं,' निंदिया ने कहा।

'निंदिया, भगवान ने हमें एक अवसर दिया है और तुम...'

'बड़े साहब के सामने हमें अपनी माँगे रखनी चाहिए, ये काम तुम ही कर सकती हो।'

'मैं ते त्वानु लिक के दे सकदा हाँ कि कुज नईं होन वाला, ऐंवेईं टैम खराब करन वाली गल्ल ए।'

'मैं क्यूँ पंगा लूँ? हमें अपनी डिमांड्स लिखकर देनी चाहिए, बस।'

'उससे कुछ नहीं होगा, वह जेब में रखकर चलता बनेगा।'

'निंदिया, ऐसा मौका हमें दोबारा फिर मिले न मिले।'

'आठ साल से हमारी सैलरी नहीं बढ़ाई गई है।'

'और न ही कभी बढ़ाई जाएगी।'

'यू शट अप, राजेंद्र।'

'दुनिया कहाँ से कहाँ पहुँच गई और हम लोकल्स वहीं के वहीं पड़े हैं।'

'काउंसिल टैक्स लगने के बाद तो हमें खाने के भी लाले पड़ जाएँगे।'

''मदन सर से हेल्प माँग सकते हैं।' मदन मोहन की चमची लाज बोली, मदन फाइलों में सिर दिए बैठा था।

'तेरे मदन सर ने राजेंद्र को कैसा मुँहतोड़ जवाब दिया था, तुझे शायद पता नहीं?'

'क्या? कब?' लाज ने हैरानी से अपने मदन सर को देखा, उनसे उसे ऐसी उम्मीद नहीं थी।

'राजेंद्र ने उनसे सैलेरी बढ़वाने के लिए बड़े साहब से सिफारिश करने के लिए कहा था। वह बोले, 'तुम जैसे भगोड़ों का ठेका ले रखा है क्या हमने? हमारी अपनी परेशानियाँ क्या कम हैं जो हम लोक्ल्स का हाल-चाल पूछते फिरें?'

'हाल न पूछें पर कम से कम डीसेंट सैलेरी तो दें।'

'हाँ, जो सुविधाएँ वे इंडिया-बेस्ड को देते हैं, वे तो दें।'

'इंडिया-बेस्ड क्या जाने लोक्लस की मजबूरियाँ? हम कैसे गुजारा करते हैं इतनी कम इनकम में।'

'वे तो सोचते हैं कि हम लंदन में मजे कर रहे हैं।'

'ऐंड दे हैव टु गो बैक।'

'इन्हें तो घर मुफ्त, गैस मुफ्त, घूमना-फिरना मुफ्त, फोन मुफ्त, ऊपर से टैक्स भी नहीं देना पड़ता।'

'यह सब छोड़ो और बैठकर लोकल्स की पराब्लमस और सैलरी के बारे में एक अच्छा सा पैटिशन बनाओ।'

'पैटिशन तो बन जाएगा, उसे पकड़ाएगा कौन?'

'सोचो, कल सुबह तक कोई तिकड़म लड़ाओ तो काम बन सकता है।'

'समय बर्बाद कर रहे हैं आप सब, बड़े साहब आएँगे और काजू खाकर चले जाएँगे।'

'इंडिया बेस्ड अपनी माँगे रखेंगे उनके सामने या हमारी?'

'किसी तरह श्यामा को पटाएँ तो काम बन सकता है; वह हैड ऑफिस से है। बड़े बॉस उसकी जरूर सुनेंगे।'

'श्यामा और लोक्लस की हेल्प? यू मस्ट बी जोकिंग।'

'श्यामा के बस का कुछ नहीं; वह तो अपना काम भी हमारे सिर पर डाल देती है।'

'लगता है श्यामा ने अपने पिछले जन्म में हीरे दान किए होंगे।'

'बड़े साब सिर्फ मोतियों से खुश नहीं होते।'

'क्या मतलब?'

'जैसे तुम्हें नहीं पता। श्यामा की लंदन की पोस्टिंग यूँ ही तो नहीं हो गई थी।'

'फिर तो उसे ही पटाना होगा।'

'अब उन्हें श्यामा की और श्यामा को उनकी जरूरत नहीं रही।'

'तो फिर?'

'बलि के लिए ताजा खून चाहिए।'

'क्या बात करती हो, तुम भी सुषमा?'

'आस्क लालसिंह, पिछले साल बड़े बॉस ने कार्ला को अपने कमरे में बुलाया था कि नहीं?'

'फिर?'

'फेर की? कारला ने ओदे मुं ते इसतीफा दे मारया ते तुर गई।'

'फिर?'

'फेर की? बड़े साब ने केया के लालसिंह सिद्दा सोहो चाल। मैं छड्ड आया औन्नु रेडलाइट एरिया विच।'

'बेशर्म कहीं का। क्या खुद नहीं जा सकता था चुपचाप?'

'ओदी बाईफ एन्नी कि सोनी ए कि मैं त्वानु दस नईं सकदा, फेर वी ओहो बाज नईंओं आंदा।'

'अगर यह बात है तो मैं उसके पास भी नहीं फटकूँगी। राजेंद्र को आगे करना चाहिए, वह हम सबसे सीनियर है।'

'मैं बीस साल से चिल्ला रहा हूँ, आज तक मेरी किसी ने नहीं सुनी।'

'हम यहाँ बारह बरस से हैं, गाँठ में बांध लो कि कुछ नहीं होने वाला।'

'यू शट अप, पहली बार हमें एक मौका मिला है और हमें इसे गँवाना नहीं चाहिए। मैं तो कहती हूँ कि कल जब निंदिया बड़े साब को फूल थमाए, तब ही हमारी पैटिशन भी उन्हें पकड़ा दे।'

'मैं नईं डरदा किदे नाल, मैन्नु फड़ा पैटीशन, मैं ओन्नु एरपोरट ते उतरदे नाल ई दे दवांगा।'

'बस फिर तो हो गया हमारा काम।'

'की मतबल ए त्वाडा।'

'हिस्टरी में पहली बार एक लोकल को बड़े साहब का वेलकम करने की ऑपरट्यूनिटी मिली है, वी शुड मेक गूड यूज औफ इट।'

'ओ गल वखरी है।'

'बस तुम ही हमारी सहारा हो, निंदिया।'

'सोन्नी कुड़ी वेख के ते साब कोरे कागज उत्ते वी सैन कर देवेगा।'

'निंदिया को देख कर तो वो ऐसे फिसलेगा कि...'

'और वह फिसल गया तो मेरा क्या होगा कालिया?'

'वैसे ही क्या कम भुगतते हैं हम? किसी आदर्श के लिए भुगतने में कुछ और ही मजा आएगा।'

'और नौकरी से मुझे निकाल दिया तो तुम खिलाओगे मुझे घर बिठाकर?'

'मेरी शादी नहीं हुई होती तो मैं जरूर...'

'निंदिया, वैसे इस कारण को लेकर बड़े साहब कोई पंगा नहीं करेंगे।'

'अगर उन्होंने कह दिया कि मैं ही उन्हें छेड़ रही थी, लोग तो उन्हीं की सुनेंगे न।'

'जरा कह कर तो देखे।'

'ठीक है, तुम लोग मुझे मरवा के ही दम लोगे पर मैं भी किसी से नहीं डरती; अत्याचार के खिलाफ मैंने सिर झुकाना नहीं सीखा।'

'निंदिया जिंददाबाद, निंदिया जिंददाबाद,'

सर और श्यामा के दफ्तर से निकलते ही सब निंदिया की मेज पर आ जमे और तैयार होने लगी उनकी याचिका। वह एक पंक्ति भी टाइप करती तो लोग उसे दस हिदायतें देते।

'ऐसे तो मुझसे नहीं लिखा जाएगा, आप सब घर जाइए। मैं पैटिशन टाइप करके आप सबको ई¬मेल कर दूँगी। लाज, मुझे तुम्हारा लैप-टौप बौरो करना पड़ेगा। आप अपने कमेंट्स मुझे रात के दस बजे तक भेज देना ताकि मैं उन्हें इनकौरपोरेट कर सकूँ। ठीक है?'

निंदिया आठ बजे तक बैठी याचिका तैयार करती रही; जैसे ही वह घर जाने को उठी, उसे 'सर' और श्यामा भीतर आते हुए दिखाई दिए। उसे वहाँ देखकर वे सकपका गए। देर हो जाने का बहाना बनाकर निंदिया जल्दी से बाहर आ गई। वे जरूर सोंचेंगे कि

इतनी देर तक दफ्तर में वह क्या कर रही थी किंतु वह तो रोज ही देर तक बैठती है; आज कुछ अधिक ही देर हो गई; बड़े साहब जो आ रहे हैं कल। कहीं श्यामा ने कंप्यूटर खोल कर उनकी याचिका पढ़ ली तो? पर श्यामा को तो कंप्यूटर लौग करना भी नहीं आता।

घर जाके भी निंदिया बिना भोजन किए ही बैठ गई सबको ई-मेल करने। देर रात तक याचिका में फेर बदल किया जाता रहा और जब निंदिया सोने चली तो सुषमा का फोन आ गया और घंटों वह उसे बड़े साहब को पटाने की तरकीबें बताती रही; निंदिया क्या पहने, उनसे कैसे हाथ मिलाए, आँखें झुका कर और पलकें झपका कर उन्हें कैसे रिझाए, बड़े साहब पास आने की कोशिश करें तो ठुमका लगा कर कैसे दूर सरक जाए आदि आदि। निंदिया को लगा कि मिश्रा-सर को उसके बजाय सुषमा को ही एयरपोर्ट भेजना चाहिए था। एक मन हुआ कि सुषमा को मौका देने के लिए बीमारी का बहाना मार कर वह घर बैठ जाए पर गर्व आड़े आ खड़ा हुआ। मन में तो लड्डू फूट रहे थे कि मिश्रा-सर ने उसे चुना था। उनके विश्वास को भला वह कैसे ठेस पहुँचाए?

यदि वेतन बढ़ा दिया गया तो निंदिया सबसे पहले बाबा और माँ के लिए मार्कस एंड स्पैंसर से बढ़िया स्वेटर्स खरीदेगी और पोस्ट से भेज देगी ताकि इस बार वे ठंड में न ठिठुरें। शायद गुस्से में वे कुछ दिन न पहनें। अच्छे पैसे मिलने लगे तो वह अलग घर भी लेगी, जहाँ जब जी चाहे बत्ती बुझाएगी, अपनी पसंद का भोजन बनाएगी, एक महीने में एक बार तो वह अवश्य मेनका के साथ बाहर खाना खाएगी और अपनी पसंद का संगीत सुनेगी। इसी उधेड़बुन में वह न जाने कब तक जागी रही।

अगले दिन सजे-धजे सभी कर्मचारी समय से पहले दफ्तर पहुँचे हुए थे। सुषमा के हाथों में एक खूबसूरत गुलदस्ता था जो निंदिया की साड़ी के रंगों से मेल खा रहा था।

'सर, देखिए तो सही कितनी अच्छी लग रही है निंदिया।' सुषमा ने मिश्रा जी का ध्यान निंदिया की ओर आकृष्ट किया तो वह भी उसे बस निहारते ही रह गए। निंदिया को लगा कि जमीन फट जाए और वह उसमें समा जाए। तभी श्यामा आई और मिश्रा जी झट से अपने कमरे में घुस गए। इसके पहले कि वह कुछ कहती, सुषमा बोल उठी, 'मैडम, ये फूल कितने मैच कर रहे हैं न निंदिया की साड़ी के साथ?' श्यामा ने एक उड़ती हुई नजर निंदिया पर डाली और सीधे सर के कमरे में घुस गई।

'अब शामत आई सर की,'

'मैं कह रही हूँ न कि श्यामा को सर कोई चारा नहीं डालते,' '

'पर बड़े साहब तो श्यामा की ही सुनेंगे।'

'बट हाउ डू यू नो?'

'श्यामा ही तो कह रही थी कि दिल्ली में वह उनकी विशेष निजी सचिव थी।'

'जब होगी तब होगी।'

श्यामा ने निंदिया को बड़े साहब के विषय में कुछ नहीं बताया, न ही निंदिया ने पूछा। कहने सुनने को था भी क्या? आखिरी दम तक श्यामा इसी प्रयत्न में थी कि उसी को एयरपोर्ट भेजा जाए। विश्वविद्यालय के प्रैजेंटेशन को स्थगित भी किया जा सकता था किंतु न जाने क्यों मिश्रा साहब उसे टाल रहे थे।

हवाई जहाज समय पर था; ठीक तीन बजे वे हवाई अड्डे से रवाना भी हो चुके थे। बड़े साहब से मिलकर निंदिया को बहुत निराशा हुई। वह सोच कर बैठी थी कि बड़े साहब कोई लंबी चौड़ी और हैंडसम हस्ती होगी किंतु वह तो ढलती उम्र के एक बहुत ही साधारण किस्म के व्यक्ति थे, मोटे और गंजे। बड़े तपाक से मिले जैसे उसे न जाने कब से जानते हों। मिश्रा सर की ओर से क्षमायाचना करते हुए निंदिया ने उनकी तरफ फूल बढ़ाए तो उसके दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर वह बोले, 'तो तुम हो निंदिया, मिश्रा बता रहा था कि वह अपनी बैस्ट स्टाफ मैंबर को भेज रहा है। जरा देखूँ तो उसकी पसंद, हूँ...'

उन्होंने निंदिया का सिर से लेकर पाँव तक मुआएना कर डाला। निंदिया को लगा कि जैसे उनकी आँखें उसके कपड़ों के नीचे झाँकने में सक्षम थीं। लालसिंह ने पहले ही सचेत कर दिया था कि कार में निंदिया को उसके साथ आगे ही बैठना चाहिए।

'निंदिया, जे कुत्ता आदमी है पर डारने की कोई लोड़ नईं, मैं तेरे साथ हूँ नौकरी तो ई कड्डनगे; होर कि कर सकदे ने?' लालसिंह की बहादुरी पर उसे गर्व हो आया। चाहे वह कितना ही बदमिजाज क्यों न हो, दफ्तर में एक वही है जो उसका अंत तक साथ देगा। मुसीबत पड़ने पर बाकी के सब हाथ झाड़ लेंगे।

याचिका अब भी पर्स में बंद थी; सोचा कि कार में बैठेगी और बातों बातों में दे देगी। बड़े साहब ने निंदिया से पिछली सीट पर अपने पास बैठ को बैठने का आग्रह किया तो वह क्या करती? बड़े आत्मीय ढंग से वह उसके बारे में पूछताछ करने लगे। लालसिंह की नजरें सड़क पर कम और पिछली सीट पर अधिक थीं किंतु बड़े साहब को उसकी कोई

परवाह न थी; वह कभी निंदिया के कंधे पर हाथ रखते तो कभी उसकी जाँघ पर। निंदिया बड़ी असहज हो उठी थी।

'तो निंदिया, तुम्हारे परिवार में कौन कौन है?'

'जी मैं यहाँ अकेली हूँ,' मुँह खोलते ही निंदिया को अपनी गलती का अहसास हो गया था। बड़े अजीबोगरीब प्रश्न थे उनके; किसी ने आज तक उससे इस किस्म की बातें नहीं की थीं।

'रात को अकेले सोती हो?'

'अकेले नींद आ जाती है तुम्हें?'

'बिस्तर में अकेले तुम्हें ठंड तो लगती होगी?'

इन सवालों का निंदिया क्या जवाब देती? उसने सोचा कि दफ्तर पहुँच कर वह सबसे कह देगी कि उन्हें पटाना उसके बस में नहीं किंतु जब लालसिंह को उन्होंने पहले सीधे होटल चलने को कहा तो निंदिया के पास दो ही रास्ते थे; 'सॉरी' कहकर चलती बने या पंद्रह मिनट उन्हें और सहे। सुषमा ने उसे बताया था कि अधिकतर पुरुष केवल अश्लील बातों से ही प्रसन्न हो जाते हैं और अगर बड़े साहब उन लोगों में से एक हैं तो वह सुन लेगी उनकी बकवास। कार के रुकते ही वह कूदकर बाहर निकले और उन्होंने निंदिया से भी उतरने का आग्रह किया।

"तुम्हें थोड़ा वेट करना होगा, मैं जरा फ्रैश हो लूँ, फिर साथ ही चलते हैं दफ्तर।'

'सर, हम लोग यहीं इंतजार करते हैं।'

'नौन-सैंस, मुझे बस दो मिनट लगेंगे।'

'सर, आप आराम से आ जाइएगा। हम लोग दफ्तर में आपका इंतजार करते हैं।'

'डोंट बी रिडिकुलस, चलो अंदर चलो, जूस वूस पियो। बाहर बैठकर क्या करोगी?' वह थोड़े नाराज होते हुए बोले। निंदिया को लगा कि वह उसे हाथ पकड़कर कार से बाहर खींचने को तैयार थे, वह बाहर निकल आई।

'कम औन, वाट'स रौंग विद यू?' वह जबरदस्ती उसे अंदर ले गए; निंदिया जानती थी कि लालसिंह की आँखें जहर उगल रही थीं।

न जाने क्या-क्या आक्षेप लगाने को आतुर अग्रदीर्घा में बैठी स्वागती ने निंदिया पर एक उड़ती नजर डाली जो उसे भद्दी लगी। एक बार लगा कि वहाँ से बस वह भाग जाए पर यह बड़ी असभ्यता होगी। जब तक बड़े साहब का सामान कमरे में रखवाया गया, वह किसी से फोन पर 'हा हा ही ही' करते रहे। जैसे ही अर्दली बाहर निकला, उन्होंने निंदिया से कहा, 'फ्रिज में से जूस निकाल लो,' अनमनी सी वह फ्रिज में झाँक कर देखने लगी, जो तरह तरह के जूस के डिब्बों, रंग-बिरंगी शराब और बीयर की बोतलों से भरा था। अभी उसने जूस का कार्टन खोला ही था कि बड़े साहब उसके ठीक पीछे आ खड़े हुए और उसे अपने आलिंगन में ले लिया। हमला इतना आकस्मिक था कि घबराहट में जूस का पूरा डिब्बा निंदिया के ब्लाउज और साड़ी पर उलट गया। अपने को किसी तरह मुक्त करके निंदिया बाथरूम में घुस गई, 'वाट ए मैस?' लालसिंह क्या सोचेगा?

बेसिन में उसे साड़ी को ऊपर तक उठाना पड़ता इसलिए निंदिया टब के सहारे खड़ी हो गई; नई साड़ी का सत्यानास हो गया था। एकबारगी तो निंदिया ने सोचा कि याचिका को रहने ही दे, क्यों अपने पैर पर स्वयं कुल्हाड़ी मारे पर वह सहकर्मियों से वादा कर चुकी थी। उसने सोचा कि यदि थोड़ी सी अवमानना से काम निकाला जा सकता है तो वह सह लेगी; कितने सहयोगी उस पर आस लगाए बैठे हैं। यह शरीर ही तो है, किसी ने छू लिया तो उसका क्या घिस जाएगा? कुँआरी तो अब वह रही नहीं थी; कौमार्य तो उसका लूटा था विक्रम खन्ना ने, जो उसे ब्रिटेन में रहने के लिए स्थायी अनुमति पत्र दिलवाने के झाँसे दे रहा था। एक दिन जब उसने निंदिया को घर बुलाया तो वह चली आई थी यह सोचकर कि वह शादीशुदा था किंतु वह नहीं जानती थी कि उसी सुबह उसकी पत्नी भारत जा चुकी थी। विक्रम का एक दूसरा रूप उसे देखने को मिला था; बिना चाय पानी पूछे, टेलिविजन पर एक नग्न विडियो लगाकर वह निंदिया को चूमने लगा। प्लास्टिक की थैली सा कुछ चढ़ाते हुए विक्रम ने जब उससे पूछा, 'कुछ यूज करती हो? तो निंदिया को याद हो आया अपनी नानी का ऐंठा हुआ मृत शरीर, जिसे माँ और परिवार की अन्य स्त्रियाँ नहलाकर नए कपड़े पहनाने का प्रयत्न कर हीं थीं। निंदिया के चेहरे पर दहशत देखकर भी विक्रम नहीं डिगा था। स्तब्धता इतनी जबरदस्त थी कि उसका शरीर काठ के एक लट्ठ जैसा हो गया। निर्बल निंदिया की दुर्बल 'न न' भला वह क्या सुनता। अपने को उसने एक इंजैक्शन लगा रखा था, जिसका असर निंदिया के धैर्य से कहीं दीर्घायु था। उस घटना के बाद से उसे सैक्स से उसे इतनी वितृष्णा हो गई कि उसने निर्णय ले लिया कि वह विवाह नहीं करेगी। वह सोचने लगी कि न जाने कैसे लोगों के दिमाग पर सैक्स छाया रहता है, उसे तो यह जानवरपन से कुछ अधिक नहीं लगा था।

स्थायी ठप्पे के लिए अपने कौमार्य पर धब्बा लगवा कर ही वह जान पाई थी कि विक्रम जैसे न जाने कितने घड़ियाल यहाँ आँखें बंद किये शिकार की तलाश में बैठे रहते हैं, जो मौका पाते ही शिकार को समूचा हड़प लेते हैं।

निंदिया ने आदतन गर्म पानी का नल खोला और तौलिए को भिगोकर वह अपने ब्लाउज और साड़ी को पोंछने लगी। बड़े साहब बाथरूम में चले आए थे और उन्होंने एक बार फिर उसे अपने आलिंगन में कस लिया था। उनकी गर्म साँसें निंदिया की गुद्दी पर छूत सी फैलने लगीं। उसका दिल जोर जोर से धड़कने लगा; उसके बदन को छूता हुआ उनका गाउन नीचे आ गिरा और उनका सख्त जिस्म निंदिया के वस्त्र भेदने लगा। उनकी पकड़ मजबूत थी और निंदिया जानती थी कि वह स्वयं को छुटा नहीं पाएगी। उसे यकायक याद आई सुषमा की बात, 'प्रास्टीट्यूटस के तो दोनों हाथ घी में होते होंगे, मजा का मजा और साथ में पैसे।' कितनी नासमझ है सुषमा? आँखें और होंठ भींचे वह पूरे प्रयत्न में लगी थी कि कहीं उसे उबकाई न आ जाए। न जाने वेश्याएँ कैसे सह पाती हैं ऐसे गंदे और असंवेदनशील लोगों को?

'निंदिया, बोलो तुम्हें क्या चाहिए?' उसकी छातियाँ दबाते हुए, वह उसके कान में फुसफुसाए, 'आस्क मी एनिथिंग, डार्लिंग।' उनके हाथ निंदिया के बदन पर फिसलते हुए उसकी जाँघों तक आ पहुँचे। ऐसे वादों की निरर्थकता से वह भली भाँति परिचित थी। दुनिया में कैसे कैसे लोग हैं जो दूसरों की मजबूरियों पर जीते हैं और दूसरों की कमजोरियों का फायदा उठाते हैं। वितृष्णा के मारे वह शिथिल हो गई। अपने शरीर से चिपके बड़े साहब के बदन से भी संवेदनहीन। सहसा उसे तिलचट्टे की याद हो आई जिसे उसने नाली में बहा दिया था। जानते बूझते कि जो हो रहा है सही नहीं है, निंदिया उसे होने दे रही है। वह भी उतनी ही गलत है जितना कि बड़े साहब। रुकना या रोकना दोनों उसके हाथ में है किंतु न तो उसे स्वयं अपने पर नियंत्रण है और न ही वह उन्हें ही रोक पा रही है। नफरत उसे उन पर कम अपने से कहीं अधिक हो आई। उसका दिमाग ठीक काम नहीं कर रहा; उसके अंग-प्रत्यंग उसके आदेश का पालन क्यों नहीं कर पा रहे? क्या सही निर्णय लेना और उस पर अमल करना सिर्फ कमजोरों की ही जिम्मेदारी है? सजा भी तो ताकतवर ही दे सकता है। शायद उस अंग्रेज गृहस्वामी के विपक्ष में जज का फैसला सही था। जिसकी लाठी उसकी भैंस; कमजोर का क्या, कीड़े की तरह उसे कभी भी बहा दिया जा सकता है।

यकायक निंदिया को अंग्रेजी की वो कहावत याद आ गयी, दि वर्म दैट टर्नड इट्स हेड।' उसकी मुट्ठियाँ बँध गईं और एक कातिलाना विचार उसके मस्तिष्क में उछला। ठंडे पानी की टूँटी क्योंकि बंद थी; नल सिर्फ खौलता पानी उगल रहा था, रगों में उबलते

उसके खून की मानिंद। जैसे ही उन्होंने निंदिया के पेटीकोट को ऊपर उठाया, वह फुर्ती से पलटी और उबलते पानी की धार ठीक उनकी टाँगों के बीच छोड़ दी। चिंघाड़ते हुए वह बाहर भागे।

'यू स्टुपिड बिच, यू ब्लडी होर। आई विल थ्रो यू आउट ऑफ द जॉब,' मुर्गे की कलगी से लटके अपने शिश्न को सँभाले और गंदी गंदी गालियाँ बकते बड़े साहब कमरे के गोल-गोल चक्कर लगा रहे थे।

बहुत सह लिया, बस अब निंदिया और नहीं सहेगी किसी की ज्यादतियाँ। कह देगी कि उसने अपने बचाव में ही बड़े साहब को घायल किया था। अगर जज ने कहा कि उसे उन्हें इतना घायल करने की क्या आवशयक्ता थी तो वह कह देगी कि यदि वह उनके किसी और अंग पर गर्म पानी डालती तो बड़े साहब उस पर आसानी से काबू पा लेते। रूपा सुनती तो खुश हो जाती। नौकरी जाती है तो जाए। सब्जी की दुकान पर काम कर लेगी, वेट्रेस बन जाएगी या वापिस भारत चली जाएगी।

बड़े साहब की इतनी हिम्मत नहीं होगी कि वह कोर्ट में निदिया पर मुकदमा दायर कर पाएँ। कोई उल्टा सीधा बहाना बना कर उसे नौकरी से निकाला भर जा सकता है। यदि बड़े साहब ने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करवाई भी तो उन्हीं की खिल्ली उड़ेगी।

स्वागती और अन्य कर्मचारियों की ओर निंदिया ने स्वाभिमान से पलट कर देखा कि जैसे कह रही हो कि उनके होटल में हो रहे दुराचार में कम से कम वह शामिल नहीं है। अस्त-व्यस्त साड़ी सँभालती हुई निंदिया सीधे कार में आकर बैठ गई।

'की होया मैडम?' लाल सिंह ने अंदाजा लगा ही लिया होगा। 'तुस्सी मैन्नु दस्सो, मैं ओदी हड्डी पसली दा पलीता न बनाया ते मेरा नां लालसिंग नईं।'

'हमारी माँगे नामंजूर हो गईं।'

'मैं तैनु दसया वी सी के इक वार मुं नुं ताजा खूं लग जावे ते...'

मन में आया कि कह दे कि अब उसका खून ताजा कहाँ रहा किंतु कुछ सोच के रुक गई; ताजा या बासी, उसे इतना तो हक होना ही चाहिए कि किसे पिलाए वह अपना खून।

'लालसिंह, जरा मुझे घर छोड़ दोगे?' एक क्षण के लिए लगा कि लालसिंह मना कर देगा किंतु मुस्कराकर वह बोला, 'जैस मैडम, बेयर एबर जू से।'

निंदिया कार में आराम से फैल कर बैठ गई, उसका दिल सँभलकर सीने में वापिस आ टिका और अन्य बागी अंग भी शरीर से वापिस आ जुड़े।

—— X ——